

दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

आ.प्र.अ.(मू.प.) 103/2008 और सि.वि. सं. 3002/2000

सुरक्षित तिथि: 15 मई, 2008

निर्णय तिथि: 21 मई, 2008

सुरिंदर कुमार व अन्य

.....अपीलार्थीगण

द्वारा: श्री नीरज कौल, वरिष्ठ अधिवक्ता
सह सुश्री ज्योति मेंदिरता, अधिवक्ता।

बनाम

स्वर्ण सिंह

.....प्रत्यर्थी

द्वारा: श्री प्रमोद आहूजा, अधिवक्ता।

कोरम:

माननीय मुख्य न्यायमूर्ति

माननीय न्यायमूर्ति डॉ. एस. मुरलीधर

1. क्या स्थानीय समाचार पत्र के संवाददाताओं को निर्णय देखने की अनुमति दी जा सकती है? हाँ
2. रिपोर्टर को संदर्भित किया जाना है या नहीं? हाँ
3. क्या निर्णय डाइजेस्ट में प्रकाशित किया जाना चाहिए? हाँ

निर्णय

न्या. डॉ. एस. मुरलीधर

1. यह अपील विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित दिनांक 24 जनवरी, 2008 को पारित उस आदेश के विरुद्ध निर्देशित है, जिसमें सिविल प्रक्रिया संहिता (सि.प्र.सं) आदेश 6 नियम 17 के अंतर्गत वादी के उस अंतर.आ.सं. 3002/2000 को स्वीकृति प्रदान की गई थी जिसके माध्यम से सि.वा.(मू.प.) सं. 166/1997 में वादपत्र में संशोधन की माँग की गई थी।

2. उपर्युक्त वाद प्रत्यर्थी वादी द्वारा दिनांक 25 जनवरी 1997 को अपीलार्थी प्रतिवादीगण के विरुद्ध ग्राम मलिकपुर कोही उर्फ रंगपुरी, तहसील महरौली, नई दिल्ली (जिसे इसके बाद संपत्ति के रूप में संदर्भित किया जाएगा) में कृषि भूमि के संबंध में विनिर्दिष्ट पालन के लिए दायर किया गया था। वादी द्वारा स्थापित मामला यह था कि यहाँ कुल विक्रय प्रतिफल जिस पर 29,25,000/- रुपये पर सहमति हुई थी। वादी के अनुसार, उसने दिनांक 16 जून, 1993 को 6,00,000/- रुपये, दिनांक 11 दिसंबर, 1993 को 5,00,000/- रुपये और दिनांक 11 जनवरी, 1995 को 17 लाख रुपये का भुगतान किया था। उसने यह दावा किया कि इनमें से प्रत्येक अवसर पर रसीद-सह-करार निष्पादित किए गए थे। हालांकि प्रतिवादीगण को जो 28 लाख रुपए का भुगतान किया गया था उसकी प्रतिवादीगण की ओर से प्रतिवादी सं. 3 (यहाँ अपीलार्थी सं. 3 के रूप में) द्वारा किसी भी प्रकार की रसीद निष्पादित नहीं की गई थी। वादी के अनुसार, संपत्ति के विक्रय के लिए कानूनी अनुमति स्वीकृत

किए जाने के बावजूद, प्रतिवादीगण विक्रय विलेख निष्पादित करने के लिए आगे नहीं आए।

3. वादपत्र के पैरा 20 में, जो वर्तमान उद्देश्य के लिए प्रासंगिक है, वादी ने उन विभिन्न तिथियों का वर्णन किया है जिन पर वाद-हेतुक उत्पन्न हुए थे। उक्त पैराग्राफ निम्नानुसार है:-

“20. यह कि वाद-हेतुक दिनांक यानी दिनांक 16 जून, 1993, दिनांक 11 दिसम्बर, 1993 तथा दिनांक 11 जनवरी, 1995 को जब कृषि भूमि की विक्रय के लिए रसीद-सह-करार निष्पादित किया गया था, उत्पन्न हुआ है। वाद-हेतुक उस समय और अधिक उत्पन्न हुआ जब दिनांक 13 जनवरी, 1995 को कृषि भूमि के विक्रय की अनुमति प्राप्त करने के लिए ए.डी.एम. (अतिरिक्त जिला दंडाधिकारी) को आवेदन प्रस्तुत किया गया था। वाद-हेतुक तब और उत्पन्न हुआ जब दिनांक 12 मई 1995 को ए.डी.एम. द्वारा सहमति प्रदान की गई और उसके पश्चात वाद-हेतुक दिनांक 26 दिसम्बर 1996 को जब प्रतिवादी सं. 2 से वादी को टेलीग्राम प्राप्त हुआ था तब उत्पन्न हुआ है। कार्रवाई का कारण तब उत्पन्न हुआ जब वादी ने बिक्री विलेख तैयार करवा लिया और उसे वादी के निवास पर निष्पादित और पंजीकृत किया जाना था, कार्रवाई का कारण जारी है क्योंकि प्रतिवादी दिनांक 26 दिसंबर 1996 को उनके टेलीग्राम के बावजूद भी नहीं आए और वादी से भारी प्रीमियम राशि की मांग शुरू कर दी है जिसे वादी ने भुगतान करने से इनकार कर दिया है, इस तरह प्रतिवादीगण ने बिक्री विलेख निष्पादित करने से इनकार कर दिया है और धमकी दे रहे

हैं कि वे संपत्ति किसी और के पक्ष में स्थानांतरित कर देंगे,
इस तरह कार्रवाई का मामला जारी है।

4. प्रतिवादीगण ने अपने लिखित कथनों में स्वीकार किया कि वे संपत्ति के पंजीकृत स्वामी थे। हालांकि, यह कहा गया था कि वादी और प्रतिवादीगण के मध्य दिनांक 15 मार्च, 1993 को रसीद-सह-करार निष्पादित किया गया था और विक्रय मूल्य 35,00,000 रुपये प्रति एकड़ निर्धारित किया गया था। यहाँ पर कुल प्रतिफल 1,89,94,791/- रुपये तय हुआ था। साथ ही यह सहमति हुई थी कि अग्रिम राशि के रूप में 85,00,000 रुपए का भुगतान किया जाएगा। दिनांक 15 मार्च, 1993 को 7,50,000 रुपए का भुगतान किया गया था। उक्त तिथि की रसीद-सह-करार को वास्तव में दिनांक 15 अप्रैल, 1993 को निष्पादित किया गया था। यद्यपि उक्त करार में यह कहा गया था कि वादी द्वारा 85,00,000/- रुपये का भुगतान किया जा रहा था, उसने प्रतिवादीगण को सूचित किया कि वह केवल 11.5 लाख रुपये की व्यवस्था कर सकता था। इसके बाद करार को पुनः लिखा गया और दिखाया गया था कि 11.5 लाख रुपये की वही राशि चार प्रतिवादीगण को अलग-अलग चेकों द्वारा भुगतान की गई थी। प्रतिवादीगण के अनुसार, करार में यह प्रावधान था कि यदि दिनांक 15 जुलाई, 1993 तक विक्रय विलेख निष्पादित नहीं किया गया तो अग्रिम राशि के रूप में प्राप्त राशि जब्त हो जाएगी। प्रतिवादीगण ने आगे यह भी स्वीकार किया कि वादी ने प्रतिवादी सं. 3 को दिनांक 23 मई, 1993 को 1,25,000/- रुपए का भुगतान किया है। इसके अलावा दिनांक 16 जून, 1993

को प्रतिवादी संख्या 3 को 6,00,000/- रुपये का भुगतान भी किया गया था। इसलिए, दिनांक 15 जुलाई 1993 तक वादी कुल 1,89,94,791 रुपये के मुकाबले केवल 26.25 लाख रुपये के प्रतिफल के भुगतान की व्यवस्था कर पाया था। बाद में, वादी ने प्रतिवादी सं. 2 को 5,00,000/- रुपये का भुगतान इस आश्वासन पर किया है कि कुल राशि दिनांक 31 दिसंबर, 1993 तक चुका दी जाएगी। चूंकि दिए गए आश्वासन का अनुपालन नहीं किया जा सका, इसलिए वादी को नोटिस जारी कर सूचित किया गया कि करार को रद्द कर दिया गया है तथा अब तक भुगतान की गई राशि जब्त कर ली गई है। इसके पश्चात दोनों पक्षकारों के मध्य एक नए करार का पालन किया गया जिसके तहत यह सहमति बनी कि संपत्ति एक करोड़ रुपये प्रति एकड़ की दर से बेची जाएगी। यदि वादी ने दिनांक 31 जनवरी 1995 तक पहले से भुगतान की गई राशि को समायोजित करने के पश्चात 50% राशि का भुगतान कर दिया, तो प्रतिवादी विक्रय के साथ सहमत हैं। प्रतिवादीगण द्वारा यह प्रकथन किया गया था कि नए करार के अनुसार दिनांक 11 जनवरी 1995 को 17 लाख रुपए की धनराशि स्वीकार की गई थी। चूंकि वादी ने इस प्रतिबद्धता को पूरा नहीं किया, इसलिए वादी को एक नोटिस जारी किया गया था जिसमें उसे यह सूचित किया गया कि नया करार भी रद्द कर दिया गया है और वादी 17 लाख रुपए की धनराशि प्राप्त कर सकता है। हालांकि, वादी ने 48.25 लाख

रुपये की राशि, जिसमें पहले से भुगतान की गई राशि भी शामिल थी वापस माँगी थी।

5. इसके पश्चात वादी ने सि.प्र.सं. आदेश 6 नियम 17 के तहत वादपत्र में व्यापक रूप से संशोधन की माँग करने के लिए अंतर.आ. सं. 3002/2000 दायर किया है। जो निम्नानुसार हैं:-

“4. यह की वर्तमान आवेदन को स्थानांतरित करने की आवश्यकता बदली हुई परिस्थितियों के कारण उत्पन्न हुई है और इस तथ्य के कारण कि प्रतिवादीगण ने इस माननीय न्यायालय के समक्ष एक विस्तृत लिखित कथन जिसमें कहा गया है कि उन्हें वादी से 48.25 लाख रुपये मिले हैं न कि 29.23 लाख रुपये, जैसा कि उल्लेख किया गया है दायर किया है।

5. यह कि प्रतिवादीगण ने आगे कहा कि सौदा 35 लाख रुपये प्रति एकड़ की दर से हुआ था और कुल प्रतिफल 12,89,94,791 रुपये (केवल एक करोड़ नवासी लाख चौरानबे हजार सात सौ इक्यानवे रुपये) था। इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता कि कुल सौदा 1,89,94,791/- रुपये पर तय हुआ था, परन्तु प्रतिवादी चाहता था की इसकी अनुमति नहीं दी जानी चाहिए थी।”

6. उक्त आवेदन के पैरा 10 और 11 में वादी ने यह स्पष्ट करने की माँग की है कि जो तथ्य वादी द्वारा अब बताए जा रहे हैं, उन्हें पूर्व में वादपत्र में क्यों नहीं बताया गया था। उक्त पैराग्राफ निम्नानुसार हैं:-

“10. क्योंकि वर्तमान मामले में प्रतिवादीगण को पूरी प्रतिफल राशि प्राप्त हो गई है, परन्तु वादी को मात्र 1,22,75,000/- (एक करोड़ बाईस लाख पचहत्तर हजार रुपये मात्र) की निपटान रसीदें ही प्राप्त हुई हैं। शेष बची हुई रसीदें प्रतिवादीगण के कहने पर नष्ट कर दी गई थी।

11. यह कि इस तथ्य को नकारा नहीं जा सकता है कि गलती और कमीशन के बजाय वादी द्वारा प्रतिवादीगण को चेक द्वारा किए गए भुगतान का वाद में उल्लेख नहीं किया गया और साथ ही उचित प्रकार से नहीं दिखाया गया था क्योंकि इसकी कोई रसीद नहीं थी चूंकि भुगतान का उल्लेख विक्रय करार में किया गया था और दिनांक 15.3.1993 के विक्रय करार को वादी द्वारा इस माननीय न्यायालय के समक्ष प्रकट नहीं किया जाना था। चूंकि यह पक्षकारगण के बीच एक पूर्व शर्त/करार था कि बिक्री विलेख 28 लाख रुपये की राशि का होगा और यही कारण था कि वादी ने 14 बिक्री विलेख तैयार करवाए थे, जिनमें से प्रत्येक की कीमत 1,90 लाख रुपये थी, जिन पर प्रतिवादीगण को हस्ताक्षर करने थे। यह सब कुछ प्रतिवादीगण के कहने पर आयकर अधिनियम की धारा 34क के तहत अनुमति को सुरक्षित रखने के लिए किया गया था।

(जोर दिया गया)”

7. यह भी प्रतीत होता है कि उक्त आवेदन में वादी ने स्वीकार किया है कि करार वास्तव में दिनांक 15 मार्च, 1993 को निष्पादित किया गया था और

और यह कि बिक्री के लिए सहमत मूल्य अलग था। यह आवेदन के पैरा 20, 21, 22 और 23 से स्पष्ट है जो निम्नानुसार है:-

“20. यह कि हालांकि दिनांक 15.3.1993 का करार प्रतिवादीगण द्वारा वादी के पक्ष में दिनांक 23.5.1993, 16.6.1993 और 11.1.1993 की रसीदों के अनुसार निष्पादित रसीदों के साथ अतिष्ठित हो गया था, जबकि अंतिम रसीद के आधार पर श्री सुकदेव कुमार द्वारा दिनांक 11.12.1993 को उसके द्वारा दी गई रसीद के अनुसार कब्जा भी दे दिया गया था और दिनांक 11.1.1993 की अंतिम रसीद प्रतिवादी सं. 4 द्वारा वादी के पक्ष में 17 लाख रुपये की रसीद के पश्चात निष्पादित की गई थी और उसी दिन वादी द्वारा प्रतिवादीगण को शेष पूर्ण भुगतान भी किया गया था और यही कारण है कि उन्होंने वादी के पक्ष में अनापत्ति फॉर्म निष्पादित किया था।

21. यह कि वाद के शीर्षक में वादी को "दिनांक 16.6.1993" शब्दों के पूर्व "करार दिनांक 15.3.1993" शब्द जोड़ने/प्रतिस्थापित करने की अनुमति दी जा सकती है।

22. यह कि वादी को पैरा सं. 2 के पश्चात एक त्रुटि रहित पैरा जोड़ने की अनुमति दी जा सकती है। निम्नलिखित पैरा को पैरा सं.(क) के रूप में प्रतिस्थापित करने की अनुमति दी जा सकती है।

“2(क) क्योंकि प्रतिवादीगण ने दिनांक 15.3.1993 को वादी के पक्ष में विक्रय हेतु जिसे प्रतिवादीगण द्वारा वादी को कथित रूप से क्रियान्वित नहीं किया जाना था एक करार निष्पादित किया था, क्योंकि वे अपनी कृषि भूमि के विक्रय के लिए

आयकर प्राधिकारियों से अनुमति कभी नहीं लेना चाहते थे।”

23. यह कि पैरा संख्या 6 में "28 लाख रुपये" शब्दों के स्थान पर इसे संशोधित करने की अनुमति दी जा सकती है क्योंकि प्रतिवादीगण को उनकी अपनी सुविधानुसार निष्पादित रसीदों के अनुसार अलग-अलग तिथियों पर 1,89,94,791 रुपये का भुगतान किया गया था। सभी प्रतिवादीगण द्वारा अलग-अलग अवसरों पर और अलग-अलग तिथियों पर प्रतिफल राशि प्राप्त करने के पश्चात इसे निष्पादित किया गया था। वादी को 67,19,791/- रुपए (सड़सठ लाख उन्नीस हजार सात सौ इक्यानवे रुपए मात्र) की निपटान रसीदें नहीं दी जा रही हैं, यद्यपि उसने पूरी राशि प्रतिवादीगण को दे दी है।

23.(क) यह कि नीचे उल्लिखित पैरा को मौजूदा पैरा सं. 7 में “वादी के स्वामित्व में भी” शब्दों के पश्चात जोड़ने की अनुमति दी जा सकती है। अब वादपत्र का पैरा सं. 7 निम्नानुसार पढ़ा जाएगा:-

“7. यह कि रसीदों के निष्पादन के दिन से ही वादी का कृषि भूमि पर अनन्य रूप से निर्बाध और निरंतर कब्जा है। वादी ने प्रतिवादीगण से कृषि भूमि खरीदी जो कि कृषि भूमि से सटी हुई भूमि है वह भी वादी की ही है। अनुबंध में पक्षकारगण के मध्य आंशिक निष्पादन में वादी ने जैसा कि वादपत्र के पैरा 1 में उल्लेख किया गया है कृषि भूमि पर कब्जा कर लिया है और उसका कब्जा संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 53 (क) के तहत भी संरक्षित है।”

8. प्रतिवादीगण (यहाँ अपीलार्थीगण के रूप में संदर्भित) ने किए जाने वाले परिवर्तनों पर आपत्ति जताते हुए उक्त आवेदन पर एक विस्तृत उत्तर दाखिल किया। उन्होंने स्पष्ट किया कि ये संशोधन वाद की मूल प्रकृति को मौलिक रूप से बदल देंगे और यदि संशोधनों को अनुमति दी गई तो इससे वादी को ऐसा दावा प्रस्तुत करने की अनुमति मिल जाएगी जो स्पष्ट रूप से परिसीमा द्वारा वर्जित है। यह भी स्पष्ट किया गया था कि वादी को निस्संदेह महत्वपूर्ण तथ्यों को छिपाने का दोषी पाया गया था, इसलिए उसे संशोधनों को करने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए।

9. विद्वान एकल न्यायाधीश ने एक संक्षिप्त आदेश में निम्नलिखित कारण बताते हुए आवेदन को अनुमति दी है:-

“पक्षकारगण के प्रकथनों पर विचार करने के पश्चात, न्यायालय की यह राय है कि हालांकि यहाँ विद्यमान अभिवाकों के साथ प्रस्तुत करने की माँग किए जाने वाले दावे की प्रकृति के संबंध में भिन्नता या असंगति है। फिर भी, इन परिस्थितियों में, न्याय के उद्देश्यों के लिए जो आवश्यक है, उसे ही अनुमति दी जानी चाहिए। हालाँकि, ये संशोधन केवल आवेदन दाखिल करने की तारीख से संबंधित होंगे।”

(जोर दिया गया)

10. अपीलार्थी के लिए उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री नीरज कौल ने आग्रह किया कि वादी द्वारा किए जाने वाले संशोधनों की माँग माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा कई निर्णयों में व्यक्त विधिनुसार अस्वीकार्य हैं। उसने आगे कहा कि वादी ने स्वयं स्वीकार किया है कि उसने वादपत्र में महत्वपूर्ण तथ्यों को छिपाया है। यह स्पष्टीकरण कि प्रतिवादीगण के कहने पर उनका उल्लेख नहीं किया गया, अविश्वसनीय था। उसने प्रस्तुत किया कि संशोधन की माँग करने वाला आवेदन स्वयं ही सम्यक विधि की प्रक्रिया का दुरुपयोग है और विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा इसे अनुकरणीय लागत के साथ खारिज कर दिया जाना चाहिए था। उसने आगे कहा कि विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा वादी द्वारा प्रतिवादीगण को भुगतान किए जाने के लिए निर्देशित 30,000/- रुपए की लागत को प्रतिवादीगण द्वारा स्वीकार नहीं किया गया था ।

11. प्रत्यर्चीगण के लिए उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री प्रमोद आहूजा ने सर्वप्रथम प्रस्तुत किया कि विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा निर्देशित 30,000/- रुपये की लागत वास्तव में प्रतिवादीगण के विद्वान अधिवक्ता को भुगतान की गई थी और उक्त लागत को स्वीकार करने के पश्चात, प्रतिवादीगण के लिए विद्वान एकल न्यायाधीश के आक्षेपित आदेश को चुनौती देना संभव नहीं होगा। उसके अनुसार, अपील दायर करने का अधिकार उस स्थिति में समाप्त हो जाएगा जब प्रतिवादीगण को दिए गए खर्च को उनके

द्वारा स्वीकार कर लिया जाता है। दूसरा, उसने प्रस्तुत किया कि न्याय के लिए संशोधनों को अनुमति देना आवश्यक है। उसके अनुसार, वादी द्वारा प्रथम दृष्टया सम्पूर्ण तथ्य न बताने के लिए दायर किया गया एक स्पष्टीकरण विश्वसनीय प्रतीत होता था। प्रतिवादीगण को इस तथ्य का लाभ उठाने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए कि वादी ने संपूर्ण जानकारी जो किसी भी मामले में प्रतिवादीगण के संज्ञान में थी, नहीं दी है। उसके अनुसार यह केवल एक पारीभाषिक अभिवाक थी। उसने कुछ निर्णयों पर भी भरोसा करने की माँग की जिनका संदर्भ आगे दिया जाएगा।

12. वादपत्र पर विचार करने पर, लिखित कथन, जो वादपत्र में संशोधन की माँग करने वाले आवेदन और उसके उत्तर पर विचार करने के पश्चात, इस न्यायालय के समक्ष यह स्पष्ट करते हैं कि वादी द्वारा किए जाने वाले संशोधन की माँग स्वयं वाद में ही महत्वपूर्ण रूप से परिवर्तन कर देगी। सर्वप्रथम, वादी ने न्यायालय में यह कहते हुए आवेदन दायर किया था कि दिनांक 16 जून, 1993 को पक्षकारगण के मध्य एक करार हुआ था, जैसा कि उस तारीख की रसीद-सह-करार से प्रमाणित होता है। आगे का संदर्भ वादपत्र में दिनांक 11 दिसम्बर, 1993 और दिनांक 11 जनवरी, 1995 की रसीद-सह-करार के उल्लेख के रूप में किया गया था। यहाँ स्पष्ट रूप से दिनांक 15 मार्च, 1993 के किसी करार की बात शुरू तक नहीं की गई है। प्रतिवादीगण द्वारा दायर लिखित कथन में जो कहा गया था, उसे देखने के पश्चात, वादी ने वाद

के मूल आधार को ही मौलिक रूप से बदलने की मांग की है जैसा कि आवेदन के पैरा 21 से स्पष्ट है जहाँ यह प्रार्थना की गई है कि “वादी को “दिनांक 16.6.1993” शब्दों के पहले “दिनांक 15.3.1993 का करार” शब्द जोड़ने/प्रतिस्थापित करने की अनुमति दी जाए”। यहाँ भुगतान की जाने वाली सहमत राशि के संबंध में भी एक महत्वपूर्ण परिवर्तन है। वादपत्र में कुल प्रतिफल 25.95 लाख रुपये बताया गया था। यहाँ अब पैरा 23 में यह प्रतिस्थापित करने की माँग की गई है कि “पैरा सं. 6 में “28 लाख रुपये” शब्दों के स्थान पर इसे 1,89,94,791/- रुपये के रूप में संशोधित करने की अनुमति दी जा सकती है...”।

13. विशिष्ट निष्पादन के लिए किसी वाद में किसी भी प्रकार से यह नहीं कहा जा सकता कि ये संशोधन मामूली प्रकृति के हैं। वास्तव में, इस न्यायालय को यह स्पष्ट रूप से प्रतीत होता है कि वादी न्यायालय में निर्दोष रूप से नहीं आया था तथा वह सम्पूर्ण तथ्यों को दबा रहा था। अब आवेदन में जो स्पष्टीकरण दिया गया है वह वास्तव में निरर्थक है। वादी ने अब सि.प्र.सं. आदेश 6 नियम 17 के तहत आवेदन में कहा है कि “इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता है कि कुल सौदा 1,89,94,791/- रुपये पर तय हुआ था, लेकिन जैसा कि प्रतिवादीगण द्वारा वांछित था, इसका प्रकटन नहीं किया जाना था।” फिर पैरा 10 में यह प्रख्यान दिया गया है कि “प्रतिवादीगण ने संपूर्ण प्रतिफल राशि प्राप्त कर ली है परन्तु वादी को मात्र 1,22,75,000/-

रुपये (केवल एक करोड़ बाईस लाख और पचहत्तर हजार रुपये) की रसीदें मिली हैं।" बाकी रसीदें प्रतिवादीगण के कहने पर नष्ट कर दी गई थी।" फिर पैरा 11 में यह प्रख्यान दिया गया है कि "सब कुछ आयकर अधिनियम की धारा 34क के तहत अनुमति सुरक्षित रखने के लिए प्रतिवादीगण के कहने पर किया गया था।"

14. आवेदन में दिए गए उपर्युक्त कथनों से इस बात में कोई संदेह नहीं रह जाता कि वादी ने इस न्यायालय के समक्ष महत्वपूर्ण तथ्यों को छिपाया है। जब प्रतिवादीगण ने लिखित कथन में स्पष्ट किया कि तथ्यात्मक स्थिति कुछ और थी, तो वादी ने इस आधार पर तथ्यों को दबाने का औचित्य सिद्ध करने का अनुचित प्रयास किया कि उसने प्रतिवादीगण के कहने पर ऐसा किया था। यह और कुछ नहीं बल्कि सम्यक विधि की प्रक्रिया का सीधा दुरुपयोग है। हाल ही में माननीय उच्चतम न्यायालय ने **उषा बालासाहेब स्वामी बनाम किरण अप्पासो स्वामी (2007) 5 एस.सी.सी. 602** में स्पष्ट किया है कि "सामान्य सिद्धांत यह है कि अभिवाकों में संशोधन की अनुमति नहीं दी जा सकती है जिससे वाद-हेतुक या दावे की प्रकृति में महत्वपूर्ण परिवर्तन हो जाए या वह प्रतिस्थापित हो जाए, यह सिद्धांत वादपत्र में संशोधनों पर भी लागू होता है। इसका लिखित वक्तव्य में संशोधन से संबंधित सिद्धांतों में कोई समकक्ष नहीं है। इसलिए, लिखित कथन में बचाव का नया आधार जोड़ना या बचाव को प्रतिस्थापित या परिवर्तित करना या असंगत अभिवाक लेना आपत्तिजनक नहीं

होगा, जबकि वादपत्र में कार्रवाई का नया हेतु जोड़ना, बदलना या प्रतिस्थापित करना आपत्तिजनक हो सकता है।”

15. विधि की उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, वादी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत निर्णय (*आंध्र बैंक बनाम ए.बी.एन. एमरो बैंक (2007) 6 एस.सी.सी.167 और बी.के. नारायण पिल्लई बनाम परमेश्वरन पिल्लई (2000) / एस.सी.सी. 712*) वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होता है। *पंजाब नेशनल बैंक बनाम इंडियन बैंक (2003) 6 एस.सी.सी. 79* में दिया गया निर्णय भी अपने तथ्यों पर परिवर्तित प्रतीत होता है। जहाँ तक वर्तमान मामले का प्रश्न है, इस बात पर विचार करने की आवश्यकता है कि क्या वादपत्र में प्रार्थना में संशोधन की अनुमति देना एक ऐसी राहत प्रदान करना होगा जो परिसीमा द्वारा वर्जित थी। यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि लिखित कथन में स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया था कि करार दिनांक 31 दिसम्बर, 1993 को समाप्त हो गया था, इसलिए विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद दायर करने का उपचार हाल ही में दिनांक 31 दिसम्बर, 2006 तक था। यह स्पष्ट किया गया था कि वाद दिनांक 25 जनवरी, 1997 को जो कि परिसीमा अधिनियम के तहत अनुबंधित समय सीमा से कहीं अधिक है, दायर किया गया था। वर्तमान संशोधन में उस करार की तारीख को, जो विशिष्ट निष्पादन के दावे का आधार है, दिनांक 15 मार्च, 1993 करने का प्रयास किया गया है, जो कि पूर्व में निवेदित किए गए करार की तिथि से भी पूर्व की है। इसलिए, संशोधन पर भी

परिसीमा की अभिवाक के आधार पर निर्णय लेने की आवश्यकता होगी। इस संदर्भ में, *मुनि लाल बनाम ओरिएंटल फायर एंड जनरल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड (1996) / एस.सी.सी. 90* में माननीय उच्चतम न्यायालय का निर्णय, जिसका अनुसरण *वीरेंद्र कुमार गोयल बनाम कुसुम भुवानिया (1997) 11 एस.सी.सी. 457* में किया गया था, प्रासंगिक होगा।

16. हालांकि, जहाँ तक वर्तमान मामले का संबंध है, न्यायालय इस बात से संतुष्ट है कि वादी ने अपने द्वारा दायर वाद में महत्वपूर्ण विवरण को छिपाया गया है। यह सुस्पष्ट है कि संशोधन के लिए आवेदन वाद दायर होने के तीन वर्ष पश्चात दायर किया गया था। न्यायालय इस बात से संतुष्ट है कि संशोधन के लिए आवेदन विधि की प्रक्रिया का दुरुपयोग है और इसलिए, विचारण न्यायालय द्वारा इसकी अनुमति नहीं दी जानी चाहिए थी।

17. इस प्रार्थना के संबंध में कि 30000/-रुपये की लागत का भुगतान किया जा चुका है, प्रतिवादीगण की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने स्पष्ट किया है कि 30,000/- रुपये के चेक कभी भुनाए ही नहीं गए थे। जहाँ तक इस संबंध में 30,000/- रुपए की लागत के भुगतान को किए जाने की अभिवाक् का प्रश्न है, यद्यपि यह तर्क दिया गया कि उक्त चेक उस अधिवक्ता के नाम पर आहरित किया गया था जो अभिलेख पर प्रतिवादीगण के लिए अधिवक्ता नहीं था, यह न्यायालय इस बिंदु पर आगे और प्रतिपरीक्षा नहीं करना चाहता है क्योंकि निश्चित रूप से, वादी के विद्वान अधिवक्ता इस बात

पर विवाद नहीं करते हैं कि चेक आज तक भुनाया नहीं गया है। किसी भी स्थिति में, प्रतिवादीगण द्वारा लागत स्वीकार करने मात्र से अपील दायर करने के उनके अधिकार का परित्याग नहीं हो जाएगा।

18. उपर्युक्त कारणों से, सि.वा.(मू.प.) 166/1997 में अंतर.आ. सं. 3002/2000 को अनुमति देने वाला आक्षेपित आदेश दिनांक 24 जनवरी, 2008 का एतद्वारा अपास्त किया जाता है और सि.प्र.सं. आदेश 6 नियम 17 के तहत आवेदन अंतर.आ.सं. 3002/2000 एतद्वारा खारिज किया जाता है। तदनुसार, अपील को अपीलार्थीगण को प्रत्यर्थीगण द्वारा आज से चार सप्ताह के अंदर 20,000/- रुपये का भुगतान करना निश्चित करते हुई स्वीकार किया जाता है।

न्या. एस. मुरलीधर

मुख्य न्यायमूर्ति

21 मई 2008

एसबी

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।